इकाई 8 अलंकार सम्प्रदाय : स्वरूप एवं आयाम

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 अलंकार : परिभाषा एवं स्वरूप

8.3 अलंकार सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्य एवं उनके मत

8.4 अलंकार सम्प्रदाय का विकास

  8.4.1 भामह से पूर्व अलंकार-चिन्तन

  8.4.2 हिंदी साहित्य में अलंकार सम्बंधी चिन्तन

8.5 सारांश

8.6 अवधारणात्मक शब्द

8.7 उपयोगी पुस्तकें

8.8 बोध प्रश्न

8.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- अलंकार तथा अलंकार सम्प्रदाय के अर्थ : स्वरूप और महत्व से अवगत हो सकेंगे,
- अलंकार सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्यों का परियच, उनके मतों का मूल्यांकन कर सकेंगे,
- अलंकार सिद्धांत के सम्प्रदाय गत विकास का ऐतिहासिक संदर्भ ज्ञान सकेंगे,
- हिंदी साहित्य में अलंकार संबंधी चिंतन की समीक्षा कर सकेंगे, और
- भारतीय काव्यशास्त्र में अलंकार सम्प्रदाय की भूमिका एवं उसके योगदान का विश्लेषण कर सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

भारतीय काव्यशास्त्र की चिन्तन भूमि इस बात कर केन्द्रित रही कि कविता का प्राणतत्व क्या है? शब्द, अर्थ या शब्दार्थ। आचार्य भामह की परिभाषा से इसे समझें तो ''शब्दार्थो सहित काव्यम्'' अर्थात् शब्द और अर्थ का सहित भाव ही काव्य है। 'सहित' से तात्पर्य सामंजस्य तथा कल्याणकारी भाव है। संस्कृत आचार्यों ने काव्य शरीर का रूपक ग्रहण करते हुए शब्द और अर्थ को उसका शरीर माना है। इस प्रकार जब

BHDC-106.indd 99 19-03-2021 08:51:36

काव्य शरीर शब्द और अर्थ द्वारा निर्मित हैं तो दो तरह की विचार धाराएँ चिन्तन के क्रम में आयीं दूसरी पहली आत्मा को प्रधानता देने वाली जिसके अन्तर्गत– रस सम्प्रदाय, ध्वनि सम्प्रदाय, औचित्य, इसरा देहवादी– जिसके अन्तर्गत अलंकार, रीति सम्प्रदाय, वक्रोक्ति सम्प्रदाय का विकास हुआ।

अलंकार सिद्धांत या सम्प्रदाय के प्रवर्तक आचार्य भामह माने जाते हैं। इन्होंने अपने मत का प्रतिपादन श्रव्य काव्य, मुक्तक काव्य के आधार पर किया तथा काव्य में चारूता (सौन्दर्य) को सर्वप्रमुख तत्व माना। अलंकार मत के अनुसार काव्य यदि सौन्दर्य युक्त है तो स्वाभाविक रूप से वह रसयुक्त होगा ही। इस प्रकार रस और अलंकार परस्पर पोषक सिद्धान्त के रूप में विकसित हुए। अलंकारवादी आचार्यों की दृष्टि में काव्योचित सौन्दर्य का जो भी स्रोत (रस, रीति, गुण, ध्वनि) है, वह अलंकार है तथा रस की अपेक्षा चारूता या सौन्दर्य काव्य के व्यापक तत्व हैं। बाद में अलंकार सम्प्रदाय विषयक सिद्धान्तों में बदलाव आए, जो उसकी विकास यात्रा को चिह्नित करते हैं। अलंकार सम्प्रदाय की विकास यात्रा के तीन चरण दिखाई देते हैं। जो इस प्रकार हैः (1) अलंकार ही सौन्दर्य (भामह, दण्डी, वामन के मतानुसार, (2) अलंकार और अलंकार्य में भेद है (रूद्रक का मत), और (3) अलंकार काव्य की बाह्य सज्जा का उपकरण (ध्वनिवादी और रसवादी आचार्यों के अनुसार)।

इस विकास यात्रा के परिणामस्वरूप आचार्यों का चिन्तन क्रम परिवर्तित, परिवर्धित होता रहा। संक्षेप में कहा जाए तो अलंकारवादी भामह दण्डी आदि ने अलंकार को काव्य की शोभा, काव्यशोभा कारक सहज धर्म तथा प्राण माना है और काव्य मे अलंकारों की अनिवार्यता का आग्रह किया है। रसवादी आचार्यों ने शोभा वृद्धि का साधन तथा शब्दार्थ का अनित्य धर्म माना है। रीतिवादी वामन, बक्रोक्तिवादी कुंतक अलंकार को काव्य का सर्वोपरि तत्व माना है।

आचार्यों द्वारा स्वीकृत अलंकार के पाँच मूल हेतु है जिसके कारण अलंकार उत्पन्न होता है – (1) स्वाभावोक्ति (2) वक्रोक्ति (3) सादृश्य (4) अतिशयता (5) गुणीभूत व्यंग्य। शब्द और अर्थ की वक्रता, व्यंजकता के आधार पर अलंकार के तीन भेद माने गए हैं – (1) शब्दांलकार (2) अर्थालंकार (3) उभयालंकर। आचार्यों ने इन अलंकारो के आधार पर उपभेद किए तथा उनका वर्गीकरण किया। अलंकारों के सुव्यवस्थित वर्गीकरण में रूद्रट का योगदान महत्वपूर्ण है।

8.2 अलंकार : परिभाषा एवं स्वरूप

काव्य में अलंकार शब्द का अर्थ दो प्रकार से मिलता है –

(1) करणपरक (2) भावपरक

करणपरक : तृतीया विभक्ति अर्थात् करण से अभिप्राय उपकरण या साधन के अर्थ में है। अलंकार शब्द 'अलम्' पद से बना है। अलम् + कृ + भावे धञ् प्रत्यय, जिसका अर्थ है, अलंक्रियते अनेन इति अलंकारः। यहाँ अलंकार सौन्दर्य के उपकरण में है। इस प्रकार इसका अर्थ है जिसके द्वारा अलंकृत किया जाता है।

भावपरक : भूषण या शोभा के भाव के रूप में। अलम् + कृ + क्तिन् = अलंकृति।

अलंकृति अलंकार : अर्थात् अलंकृति ही अलंकार है। इस अर्थ में अलंकार सौन्दर्य से अभिन्न है। इसी अर्थ में वामन ने अलंकार को सौन्दर्य का पर्याय कहा था। ''सौन्दर्य

मूलंकारः अलंकार की परिभाषाओं का स्वरूप अलंकार सम्बंधी अवधारणा के विकास से साथ-साथ परिवर्तित होता रहा। अलंकार को विभिन्न आचार्यों ने इस प्रकार परिभाषित किया है– (1) अलंकारवादी दृष्टि से (2) रसवादी दृष्टि से।''

अलंकारवादी दृष्टि :

1) **आचार्य भामह** : ये अलंकार सम्प्रदाय के संस्थापक माने जाते हैं। इनकी दृष्टि में वाचा वक्रार्थ शब्दोक्ति वाणी का अलंकार बन जाती है।

2) **दण्डी** : काव्य शोभाकारान् धर्मान् प्रचक्षते। (*काव्यालंकार,* 1/5) रूद्रट के मत में 'वाणी' अभिधान का विशेष प्रकार ही अलंकार है।''

3) **वामन** : वामन के अनुसार काव्य में सौन्दर्य का नाम ही अलंकार है – सौन्दर्य अलंकार : अलंकार के कारण ही काव्य ग्राह्य होता है– काव्यम् ग्राह्यमलंकारात्।

उद्भट : 'चारूत्व हेतुत्वेडपि गुणानामलंकाराणम्।' 'गुण और अलंकार चारूत्व के हेतु है।' ऐसा उद्भट मानते हैं।

अंगीकरोति यः काव्यं शब्दार्थवनलंकृती।
असौ न मन्यते करूमादनुष्णमनलंकृती।। (*चंद्रालोक,* 1/8) 3

इन परिभाषाओं पर विचार करने के बाद अलंकारवादी आचार्यों का शरीरवादी दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है। अलंकारवादी आचार्यों के काव्य शरीर के सौन्दर्य के आधार पर अलंकारों को काव्य का अनिवार्य तत्व माना। परन्तु रूद्रक के पश्चात् एक नई चिंतन प्रणाली ने जन्म लिया। रूद्रक रस को भी अलंकार विवेचन में महत्वपूर्ण मानते हैं। काव्य में रसभाव को स्वतंत्र स्थान देते हैं। अन्य आचार्यों ने गुण, रस, रीति आदि सभी सौन्दर्य तत्व अलंकाराश्रित ही माना है। इन आचार्यों की दृष्टि अभिव्यक्ति तक सीमित रही।

रसवादी दृष्टि : ध्वनि और रस सम्प्रदाय की स्थापना होने के बाद अलंकारों के प्रति आचार्यों के दृष्टिकोण में भी अंतर आया। जहाँ अलंकारवादियों ने अलंकार को काव्य का प्राणतत्व माना था, वही रस ध्वनि आचार्य इसे साधन के रूप स्वीकार करते हैं।

आनन्दवर्धन : ध्वनिवादी आनन्दवर्धन की दृष्टि में, जो अंगी अर्थ के अवलंब है उनको गुण कहते हैं और कनक आदि के समान जो अंगाश्रित हैं, वे अलंकार हैं–

मम्मट : अलंकार काव्यधुरूष के शरीर (शब्द और अर्थ) को विभूषित करते हैं, अतः वे मानव शरीर के हार आदि आभूषण की तरह उसके अलंकार हैं।

विश्वनाथ : आचार्य विश्वनाथ ने शोभा की अतिशयता और रसादि के उपकारक अस्थिर धर्मों को अलंकार की संज्ञा दी है।

8.3 अलंकार सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्य एवं उनके मत

भामह, दण्डी तथा उद्भट अलंकार सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्य हैं। इसके अलावा जयदेव, रूद्रट तथा प्रतिहारेन्दुराज का नाम भी लिया जा सकता है। आचार्य भामह अलंकार सम्प्रदाय के संस्थापक तथा प्रवर्तक आचार्य हैं जिनकी मान्यताओं का पोषण

BHDC-106.indd 101 19-03-2021 08:51:36

आगे चलकर रूद्रट तथा उद्भट ने किया। अलंकार सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्यों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार दिया गया हैं–

अलंकार वर्ग के आचार्य

1) आचार्य भामह : अलंकार सिद्धांत के प्रवर्तक आचार्य भामह है जिन्होने इसे सिद्धांत रूप में निरूपित किया। इनका प्रमुख ग्रंथ ''काव्यालंकार'' है। सर्वप्रथम इनकी काव्यगत अवधारणा को जानना आवश्यक है। आचार्य भामह को परिभाषित करते हुए लिखा है कि ''शब्दार्थो सहितौ काव्यम्''। शब्द और अर्थ के सहित भाव को काव्य कहते हैं। अतः भामह काव्य का शरीर शब्द और अर्थ को मानते हैं। अलंकार के कारण काव्यशरीर (शब्दगत और अर्थगत) में चारूता सौन्दर्य भाव उत्पन्न होता है। आचार्य भामह इस काव्य शरीर में अलंकारत्व का मूल हेतु 'वक्रोक्ति' को मानते हैं। वक्रता के बिना काव्य में अर्थ का विभावन, प्रस्फुटन नहीं होता। वक्रता के कारण अर्थ विशिष्ट रूप सुन्दर हो जाते हैं और उसमें कलात्मकता आ जाती है। वक्रार्थ शब्दोक्ति वाणी का अलंकार बन जाती है (''वाचां वक्रार्थ शब्दोक्तिरल काराय कल्पते'' काव्यालंकार 5/66) अर्थ में चमत्कृति उत्पन्न करने की सामर्थ्य से यह वक्रता अलंकार रचना के लिए प्राण है। इन दोनों श्लोकों में आचार्य भामह ने वक्रता (भंगिमा) तथा वक्रता को अर्थ चमत्कृति उत्पन्न करने का कारण मानकर अलंकार के लिए अत्यन्त आवश्यक माना है। इसी कारण अलंकार को भामह ने अनिवार्य आभूषक तत्व माना है। उनका मत हैः न कान्तमपि निर्भूष विभाति बनिता मुखम्। (*काव्यालंकार,* 1/13) अर्थात् अलंकारों के बिना काव्य उसी प्रकार शोभित नहीं हो सकता, जिस प्रकार किसी सुन्दर स्त्री का मुख बिना अलंकारों के शोभा नहीं पाता। भामह की इसी व्यापक दृष्टि के कारण रस रसवत् अलंकार में, ध्वनि को अन्योक्ति, रीति वृत्यानुप्रास रूप में समाहित हो गए। उनकी यही समादेशी दृष्टि अलंकार सम्प्रदाय में विवाद, मतभेद का कारण बना। सूत्ररूप में कहा जाए तो – काव्य की अन्तः सत्ता = चारूता और चारूता का श्रोत = अलंकार, अलंकार का निर्वाहक = वक्रता (भंगिमा) है। वक्रता के मूल में अतिशयता (उत्कर्ष) को आवश्यक मानते हैं। अतिशय और वक्रता इनकी दृष्टि में एक दूसरे के पूरक और पर्याय है। उनके अनुसार जो उक्ति बढ़ा-चढ़ाकर कही जाती है अतिशय या अतिशयोक्ति और जो उक्ति घुमा-फिरा कर कही जाय वह वक्रोकित है। अलंकारों के प्रयोगार्थ वक्र शब्दार्थ ही आवश्यक हैं। भामह कथन को दो वर्गों में विभाजित करने हैं – (1) अनलंकृत कथन अथवा वार्ता (2) अलंकृत कथन अर्थात् काव्य। निर्भूष (अलंकार विहीन) कथन काव्य की श्रेणी में नहीं आते हैं।

भामह अलंकार और अलंकार्य में भेद नही करते। आचार्य भामह की दृष्टि काव्य के अभिव्यक्ति गत सौन्दर्य तक ही सीमित रही। इन्होंने लगभग 35 अलंकारों का उल्लेख किया है जिसमें उपमा, रूपक, श्लेष आदि अलंकार प्रमुख है। भामह ने शब्दालंकार पर विशेष बल दिया है।

2) दण्डी : आचार्य दण्डी का महत्वपूर्ण ग्रंथ काव्यादर्श है। जिसमें उन्होंने अपनी अपनी काव्यशास्त्रीय मान्यताओं का विवेचन किया है। अलंकार को काव्य का शोभाकारक धर्म मानते हुए दण्डी ने रस, रीति, गुण काव्यतत्वों के साथ संधि, संध्याग, वृत्ति, लक्षण आदि नाट्य तत्वों को भी अलंकार में समाहित कर लिया। इस प्रकार दण्डी अलंकार को व्यापक अर्थ में *व्याख्यायित* करते हैं। वे अलंकार को काव्य से सम्बंधित समग्र सौन्दर्य विधान का कारक या धर्म मानते हैं। दण्डी ने ''काव्य शोभाकरान् धर्मान् अलंकारान् प्रचक्षते'' (काव्यादर्श) में अलंकार को शोभाकारक धर्म

BHDC-106.indd 102 19-03-2021 08:51:36

कहकर काव्य के साथ उसकी अभिन्नता बताई है। अर्थात् अलंकार वह धर्म है जो काव्य में स्वभाविक रूप से सौन्दर्य सृष्टि करता है।

3) उद्‌भट : इनका प्रसिद्ध ग्रंथ ''काव्यालंकार सार संग्रह'' है। अलंकार शास्त्र में इस ग्रंथ का महत्व इसलिए रहा कि उद्‌भट ने भामह की अलंकार सम्बंधी मान्यताओं का इसमें विवेचन किया है। उद्‌भट भामह के अनुयायी आचार्यों में से हैं। इनका अलंकार विवेचन भामह के अनुरूप है। आचार्य उद्‌भट की मौलिक उद्‌भावना यह थी कि वे अलंकार और गुण दोनों को महत्वपूर्ण मानते थे। साथ ही गुण और अर्थालंकार दोनों का शब्दार्थ के साथ अनिवार्य सम्बंध स्वीकार करते हैं। उनकी दृष्टि में गुण और अलंकार चारूत्व के हेतु हैं। उद्‌भट ने श्लेष को सभी अलंकारों में श्रेष्ठ मानते हुए शब्द श्लेष तथा अर्थश्लेष की कल्पना की तथा इन दोनों को अर्थालंकारों में परिगणित किया।

4) रूद्रट : रूद्रट के ग्रंथ का नाम 'काव्यालंकार' है। आचार्य रूद्रट ने सर्वप्रथम अलंकारों का वैज्ञानिक वर्गीकरण प्रस्तुत किया। इन्होंने अर्थालंकारों के चार वर्ग– वास्तव, औपम्य, अतिशय तथा श्लेष में विभाजित किया। भामह के समय से ही रस तथा भाव को स्वतंत्र रूप से अलंकारों के अंतर्गत स्थान नहीं दिया गया। इस अभाव को रूद्रट ने पूर्ण किया। उन्होंने रसवत आदि को अलंकार की संज्ञा नहीं दी। भामह के समय से रस और भाव को अलंकार के भीतर स्थान देने की त्रुटिपूर्ण परम्परा का परिशोधन किया। रूद्रट के अनुसार कवि प्रतिभा से उद्‌भ्त अभिधान अर्थात् कथन विशेष का नाम अलंकार है। काव्य में रूद्रट ने अलंकार और रस को समान महत्व दिया। काव्य में इन दोनों का नियोजन आवश्यक माना है।

5) आचार्य वामन : वामन रीति सम्प्रदाय के सम्प्रदाय के प्रवर्तक हैं। इनके ग्रंथ का नाम 'काव्यालंकार सूत्रवृत्ति' है। वामन गुण और अलंकार में भेद मानते हैं। वामन ने गुण को काव्य का नित्य धर्म और अलंकार को अनित्य धर्म माना है। 'काव्य शोभायाः कर्तारो धर्मा गुणाः।' उनके कथनानुसार गुण यदि काव्य के शोभाकारक धर्म हैं तो अलंकार उस शोभा के वर्धक हैं और रस गुणों की कांति। इस प्रकार वामन की दृष्टि में अलंकार का महत्व गुणों की अपेक्षा कम हो गया। वे वक्रोक्ति को अर्थालंकार को परिगणित कर उसे सादृश्य में उत्पन्न होने वाली लक्षणा के रूप में परिभाषित किया। वामन ने अर्थालंकार को उपमा का प्रपंच माना हैं। आचार्य वामन अलंकार को साध्य और साधन दोनों माना हैं।

अलंकार के संदर्भ में उनके दो सूत्र उल्लेखनीय हैं–

(i) काव्यं ग्राह्यलंकारात् (काव्य अलंकार के कारण ग्राहय होता है)

(ii) सौन्दर्यम् अलंकारः (अलंकार सौन्दर्य है)

6) आचार्य कुंतक : वक्रोक्ति वादी आचार्य कुंतक को अलंकार सम्प्रदाय से प्रभावित माना जा सकता है। वे वक्रोक्ति को काव्य की आत्मा सिद्ध करते हैंः ''वक्रोक्ति ही शब्द तथा अर्थ दोनों का अलंकार है। साथ ही यह भी स्वीकार किया है कि अलंकार सहित शब्दार्थ की ही काव्यता होती है। अतः अलंकार की स्थिति काव्य में अनिवार्य है। अलंकार वादियों ने 'अलंकार मूला वक्रोक्ति को काव्य की आत्मा माना तो वहीं कुंतक काव्य के सारे तत्वों-रीति, अलंकार, ध्वनि, रस आदि को वक्रोक्ति में समाविष्ट किया है।

BHDC-106.indd 103 19-03-2021 08:51:36

7) भोजराज : इनका 'महत्वपूर्ण ग्रंथ ''सरस्वती कंठा भरण'' तथा श्रृंगार प्रकाश हैं 'सरस्वतीकरण भरण में अलंकार विवेचन। वृहद रूप से किया गया हैं। भोज भी रीति और गुण को अलंकारों के अंतर्गत मानते हैं। वे अलंकार को महत्वपूर्ण मानते थे। इन्होंने नये अलंकार के रूप में प्रबंधालंकार की उद्‌भावना कर प्रबंध या नाटक को भी अलंकारों को परिगणित किया। भोज रस को प्रमुखता देते हैं। ये अलंकारों का प्रयोग रस के उन्मीलन के लिए ही मानते हैं।

8) मम्मट : इनका प्रमुख ग्रंथ ''काव्य प्रकाश'' है। मम्मट ने काव्य को सालंकार माना। परन्तु काव्य में अलंकार की अनिवार्यता को महत्व नही दिया– ''अनलंकृति पुनः क्वापि।'' उन्होने अलंकार को काव्य का अस्थिर धर्म माना। मम्मट रसवादी आचार्य थे। अतः वे काव्य में रस को प्रधान तथा अलंकार को उसके अलंकार को उसके अंग रूप में ग्रहण किया है। मम्मट समन्वयवादी आचार्य थे। उन्होंने भामह, दण्डी, उदभट रूद्रट आदि आचार्यों के मतों की समीक्षा करके अनेक परिवर्तन, संशोधन किया। उनका मत है कि गुण रस के साक्षात एवं नित्य रूप से उत्कर्षक है, पर अलंकार शब्दार्थ की शोभा के माध्यम से ही रस के उत्कर्ष है, और वह भी अनित्य रूप से।

9) रूय्यक : रूय्यक ने अलंकारिक आचार्यों भामह से लेकर ''व्यक्ति विवेककार (महिमभट्ट) तक के मतों का विवेचन, विश्लेषण किया है। अलंकार विषम पर उनकी महत्वपूर्ण कृति ''अलंकार सर्वस्व'' है। ध्वनिवाद का इस ग्रंथ पर प्रभाव देखा जा सकता है। वे मानते हैं कि काव्य का जीवन व्यंग्य है, गुणालंकार उसके चारूत्व हेतु, रसादि को अलंकार कहना उचित नही। परिणाम, उल्लेख, विभिन्न, अर्थापत्ति तथा विकल्प– इन पाँच नवीन अलंकारों की उद्‌भावना रूय्यक ने की। इनका अलंकार वर्गीकरण, विवेचन सुव्यवस्थित होने से परवर्ती आचार्यों द्वारा भी मान्य रहा।

10) जयदेव : जयदेव का 'चन्द्रालोक' अलंकार शास्त्र का अत्यन्त लोकप्रिय ग्रंथ है। जयदेव ने एक बार फिर अलंकार सम्प्रदाय की पुनर्स्थापना का प्रयत्न किया। जब मम्मट जैसे आचार्यों द्वारा अलंकार के महत्व को कम किया गया तब जयदेव ने काव्य के लिए अलंकार को अनिवार्य माना। मम्मट द्वारा प्रतिपादित काव्य लक्षण शब्दार्थावन लंकृती पुनः क्वापि – का खण्डन हुए जयदेव कहते हैं– जो व्यक्ति अलंकार रहित काव्य को काव्य मानते हैं, वे विद्वावान अग्नि को उष्णता रहित क्यों नही मान लेते –

> अंगीकरोतिः यः काव्यं शब्दार्थावनलंकृती।
> असौ न मन्यते कस्माद अनुष्णमनलंकृती।।

जयदेव अतिशयोक्ति या वक्रोक्ति को काव्य का मूल स्वीकार नहीं करते।

8.4 अलंकार सम्प्रदाय का विकास

अलंकार एक व्यापक काव्य शास्त्रीय अवधारणा के रूप में भरत मुनि से लेकर जगन्नाथ तक विकसित होता रहा। जिसके अंतर्गत वक्रोक्ति, रीति, गुण, वृति तथा शब्दशक्ति आदि विवेचित होते रहे। आज अलंकार शब्द काव्य के शिल्प पक्ष के लिए रूढ़ सा हो गया है। इसकी विकास यात्रा को डॉ॰ विजयेन्द्र स्नातक ने तीन भागों में विभाजित किया है–

(1) ध्वनि पूर्व काल, (2) ध्वनि काल, तथा (3) ध्वन्युत्तर काल। इन तीन युगों में अलंकार ग्रंथों की सुदीर्घ परम्परा दिखाई पड़ती है जिनमें उल्लेखनीय है –

BHDC-106.indd 104 19-03-2021 08:51:36

(1) भामह – काव्यालंकार (7वीं शती) (2) दण्डी– काव्यादर्श (7वीं शती) (3) उद्‌भट– काव्यालंकार सार सग्रंह (8वीं शती (4) वामन– काव्यालंकार सार संग्रह (7वीं शती का पूर्वार्द्ध), (5) आनंद वर्धन – ध्वन्यालोक (9वीं शती का उत्तरार्द्ध) (6) कुन्तक – वक्रोक्ति जीवितम् (10वीं शती का पूर्वार्द्ध) (7) भोजराज –सरस्वती कंठाभरण (11वीं शती का पूर्वार्द्ध) (8) मम्मट – काव्यप्रकाश (11वीं शती) (9) रूय्यक – अलंकार सर्वस्व (12वीं शती का पूर्वार्द्ध) (10) जयदेव का चन्द्रालोक (13वीं शती (11) विश्वनाथ का साहित्य दर्पण (14वीं शती) (12) अप्पय दीक्षित – कुवलयानंद (17वीं शती का पूर्वार्द्ध) (13) पंडितराज जगन्नाथ – रस गंगाधर (17वीं शती)। ध्वनि पूर्व काल के आचार्य भामह, दण्डी, उद्‌भट, वामन तथा रूद्रट है। इस काल में अलंकार को ही काव्य का सर्वोपरि धर्म माना। काव्य के शेष तत्व या धर्म या तो गौण हो गये तथा अलंकार के अन्तर्गत अन्तर्भुक्त हो गये। इस काल के आदि आचार्य भामह तथा अंतिम आचार्य रूद्रट हैं।

ध्वनिकाल पूर्ववर्ती आचार्यों के भ्रामक मतों के खण्डन तथा ध्वनि के महत्व का मंडन काल है। आनन्द वर्धन, कुंतक तथा महिमभट्‌ट प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में ध्वनि से ही संबद्ध तथा प्रभावित है। यह काल अलंकार के अतिरेक पूर्ण महिमा के खण्डन का है तथा अलंकारों के उचित स्थान, प्रयोग का सम्यक किया गया।

ध्वन्युत्तर काल के प्रमुख आचार्य हैं– मम्मट, रूय्यक, विद्‌याधर, विश्वनाथ तथा पंडित राज जगन्नाथ। यद्यपि काल की दृष्टि से जयदेव, केशव मिश्र तथा अप्पय दीक्षित इसी काल के अन्तर्गत आयेंगे। किन्तु मत पोषण की दृष्टि से ये ध्वनि पूर्व काल के अनुयायी हैं। इन तीनों आचार्यों का प्रतिपाद्‌य अलंकार की पुनर्स्थापना या सर्वोपरि रूप में वर्णन करना है।

संस्कृत अलंकार शास्त्र की इन तीन युग प्रवृत्तियों में से ध्वनि पूर्वकाल के मतवाद का ही प्रभाव हिंदी के आचार्यों पर पड़ा है।

8.4.1 भामह से पूर्व अलंकार-चिन्तन

वैदिक काल में यह शब्द 'अरंकृति' के अर्थ में 'अर्' पद से सम्बंधित है। मूल धातु अरम् शोभने अलंकरण के अर्थ में है। उपनिषद काल तक आते-आते वह 'अलंकृत' शब्द बन गया। (छान्दोग्य उपनिषद)। संस्कृत में अलंकार शास्त्र का प्रणयन निरूक्तकार यास्क से ही मानना चाहिए, यास्क ने उपमा का लक्षण निरूपण किया है और ऋग्वेद के अनेक *मंत्रों* का उदाहरण भी दिया है। लेकिन यास्क के उपमा भेद काव्यशास्त्रीय सिद्धांतों पर आश्रित न होकर सामान्य अर्थ में प्रयुक्त है। यद्यपि यास्क से पूर्व गार्ग्य आदि आचार्यों द्वारा उपमा का विवेचन हो चुका था। अलंकार के एकाधिक शास्त्रीय शब्दों की व्याख्या पाणिनि के सूत्रों, काव्यायन के वार्तिक तथा पंतजलि के भाष्य में मिल जाते हैं। यह अलंकार चिंतन का आरम्भिक दौर था। आगे चलकर भरत मुनि ने ''नाट्‌यशास्त्र'' के 16वें अध्याय में अलंकारों का वर्णन किया है और चार अलंकारों– उपमा, दीपक, रूपक, यमक का उल्लेख किया। रस अध्याय में अलंकार शब्द काव्य की रूप-विभूति के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। उनके मत में 'काव्य अलंकार और गुण दोनों के द्वारा अनेक रूपों में अलंकृत होता है।' (अलंकाराश्च गुणश्चैव बहुभि समलंकृतः)

आचार्य भरत के नाट्‌यशास्त्र के पश्चात् विष्णधर्मोत्तर पुराण 18 अलंकारों की प्रामाणिक सूची देने का दावा करता है। भरत और भामह के बीच काव्यशास्त्र के

BHDC-106.indd 105 19-03-2021 08:51:36

अन्य आचार्य भी हुए जिनका संकेत भामह ने 'काव्यालंकार' में 'अन्यै', 'कौर्श्चदः अपरे'; केचित्' पदों में परोक्ष रूप से दिया है तथा रामशर्माच्युत, मेधाविन्, राजमित्र अच्युत्तोत्तर, शाखावर्धन नामक आचार्यों का उल्लेख भी किया है। ये नामोल्लेख 'काव्यालंकार' के अलावा अन्य साधनों जैसे शिलालेखों, तामपत्रों से भी प्राप्त हुए। लेकिन काव्यालंकार से पूर्व कोई ग्रंथ अलंकार शास्त्र पर नहीं प्राप्त हुआ।

8.4.2 हिंदी साहित्य में अलंकार सम्बंधी चिन्तन

रीतिकाल के आचार्यों की जो परम्परा हमें मिलती है; उनमें से कई रीति काल के प्रमुख कवि हैं। इनका योगदान इस रूप में महत्वपूर्ण है कि उन्होंने संस्कृत काव्यशास्त्र सिद्धांतों को हिंदी में प्रस्तुत किया। श्रृंगारिकता, अलंकारिकता तथा चमत्कार प्रदर्शन प्रियता इस काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ होने के नाते आचार्य कवियों ने अलंकारिता को विशेष महत्व दिया। अतः अलंकार निरूपण अलंकार वादी, सर्वांगनिरूपक, रसध्वनिवादी सभी आचार्यों ने किया। हिंदी में अलंकार शास्त्र का विकास केशवदास से माना गया है। केशवदास, चिंतामणि, जसवंत सिंह, मतिराम, भूषण, कुलपति, श्रीपति, सूरति मिश्र, देव, भिखारीदास के अलावा कई छोटे बड़े रीतिकालीन कवियों ने अलंकार विवेचन पर ग्रंथ लिखे हैं, किन्तु संस्कृत आचार्यों जैसी विवेचन शक्ति इनके यहाँ नहीं मिलती। प्राचीन संस्कृत आचार्यों के अलंकार विवेचन दण्डी से प्रभावित है। 'कविप्रिया' में केशवदास भामह का अनुसरण करते हुए ''भूषन बिनु न विराजई कविता वनिता मीत'' अर्थात् अलंकार के बिना कविता में काव्योचित चारूता उत्पन्न नहीं होती'' मानते हैं। वे भामह की तरह चारूता के दो रूप– निसर्गजात (स्वाभाविक) दूसरी अर्जिनत चारूता को स्वीकार करते हैं। अलंकार अर्जित चारूता ही है। जिसके कारण काव्य मनोरम प्रतीत होता है।

आचार्य चिंतामणि की दृष्टि में अलंकार काव्यशोभा विधायक तत्व है। उन्होंने काव्य पुरुष का प्रतीक लेते हुए कहा है कि शब्दार्थ काव्य-पुरुष का शरीर है, रस उसकी आत्मा है, अलंकार हारादि की तरह शोभासाधन है– सबै अर्थ तनु वर्णिये, जीवित रस जिय जानि।

अलंकार हारादि पे उपमादि मन आनि।।

बाद के रीतिआचार्यों का अलंकार विवेचन मम्मट के ''काव्य प्रकाश'' जयदेव के ''चन्द्रालोक'' और अप्पयदीक्षित के ''कुवलयानंद'' के अलंकार विवेचन से प्रभावित है। सोमनाथ मम्मट का अनुसरण करते हुए कहते हैं– ''अलंकार कहूँ रस को पोषत है, कहूँ उदास, कहूँ दूषक होय है।

कुलपति मिश्र अलंकार को उक्ति का एक प्रकार मात्र मानते हैंः–

''उक्ति भेद ते होत है, अलंकार यह जानि''।

रसवादी देव मानते हैं– काव्य भी एक जैविक विकास की तरह है– जिसकी सूक्ष्मरूप में निहित सम्भावनाएँ अनुकूल परिवेश पाकर बाद में पुष्पित– पल्लवित होती हैं। अनुभूति काव्य का बीज है– उसी से भाषा अलंकार आदि सब फल फूल की तरह फूटते और विकसित हैं। देव ने कहा– अलंकार शब्दार्थ के फल-फूलनि आमोद।

देव कवि की दृष्टि में अलंकार सरस कविता को लावण्यमय बना देते हैं। उनके अनुसार सरस, सुवरण और सुरवद पद वाली कविता– कामिनी अलंकार धारणा करने से अद्भुत रूप वाली हो जाती है–

अलंकार पहिरे अधिक अद्‌भुत रूप लखाति।

देव अलंकारों के महत्व तथा शब्दांलकार, अर्थालंकार पर भी चर्चा करते हैं। महाराज जसवंत सिह के भाषा भूषण की रचना चंद्रालोक एवं कुवलयानंद की पद्धति पर हुई है। इसमें लक्षणों के अतिरिक्त उदाहरण के भी अनुवाद किए गये हैं और यथास्थान मम्मट, भामह एवं विश्वनाथ के ग्रंथों की सहायता ली गयी।

मतिराम का ''ललितललाम'' भूषण कृत 'शिवराज भूषण' अलंकार विषयक ग्रंथ है। भिखारीदास ने रस को काव्यात्मा की संज्ञा दी है; अलंकार उसकी शोभा के लिए आभूषण है, गुण उसके रूप रंग हैं और दोष उसकी कुरूपता माना है– रस कविता को अंग, भूषन हैं, भूषन सकल।

गुन सरूप और रंग, दूषन करै कुरूपता।। दास की अलंकार–विषयक धारणा ध्वनिवादी आचार्यों की भाँति है। इनके अनुसार अलंकार काव्य के बाह्य शोभाकारक आभूषण मात्र हैं। दास अलंकार को काव्य का अनिवार्य तत्व स्वीकार करते हैं।

इस प्रकार रीतिकालीन हिंदी आचार्यों ने अलंकार की स्थिति निर्धारण में संस्कृत आचार्यो के सिद्धान्तों का अनुसरण किया। इन आचार्यों में अधिकांश की दृष्टि रसवादी थी।

रीतिकाल के बाद अर्जुनदास के डिया का 'भारती भूषण', जगन्नाथ दास भानु का 'काव्यप्रभाकर', रामदहिन मिश्र का 'काव्यदर्पण' अलंकार विवेचन की दृष्टि से महत्वपूर्ण ग्रंथ हैं।

आधुनिक हिंदी आलोचकों में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अलंकारों पर नये ढ़ग से विचार किया है। ''रस मीमांसा'' के अप्रस्तुत रूप विधान प्रकरण में अलंकार को भाव या रस का उत्कर्ष विधायक तत्व घोषित करते हैं– ''भावों का उत्कर्ष दिखाने कराने में कभी–कभी सहायक होने वाली युक्ति अलंकार है।''

आचार्य शुक्ल रसवादी आचार्य हैं और वे अलंकार को रस के एक सहायक तत्व के रूप में स्वीकार करते है। आचार्य शुक्ल भी अलंकारों को काव्य का अस्थाई धर्म ही मानते हैं, सचेत भाव से उन्होंने कभी-कभी शब्द का व्यवहार किया है। लेकिन कवि की सृजन–प्रक्रिया में अलंकार किस प्रकार अनिवार्य हो जाते हैं, स्वतः स्फूर्त हो उठते हैं, इस सम्बंध में सुमित्रानंदन पंत ने ''पल्लव'' की भूमिका में लिखते हैं– ''अलंकार केवल वाणी की सजावट के लिए नहीं, वे भाव की अभिव्यक्ति के विशेष द्वार हैं। भाषा की पुष्टि के लिए, राग की परिपूर्णता के लिए आवश्यक उपादान हैं, वे वाणी के आचार, व्यवहार, रीतिनीति हैं, पृथक् स्थितियों के पृथक स्वरूप, भिन्न अवस्थाओं के भिन्न चित्र हैं।''

आचार्य शुक्ल के अतिरिक्त पं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी, डॉ. नगेन्द्र, डॉ. रमाशंकर शुक्ल 'रसाल', डॉ. राम मूर्ति त्रिपाठी, डॉ. भगीरथ मिश्र, आचार्य देवेन्द्र नाथ शर्मा तथा डॉ. भोलाशंकर व्यास ने अलंकार के संबंध में अपने विचार व्यक्त किए हैं।

इस प्रकार अलंकारी के सम्बंध में आचार्यों और आलोचकों की विभिन्न दृष्टियाँ रही हैं। कुछ ने काव्य में अलंकारों को एक आवयक तत्व के रूप में स्वीकार किया है, तो कुछ ने इसे शोभा विधायक धर्म माना। किसी ने इसे भाव या रस का सहायक तत्व माना, तो किसी ने इसे अनिवार्य तत्व के रूप में स्वीकार किया। इतना होने पर भी अधिकांश आलोचकों ने यह स्वीकार किया कि अलंकार प्रयोग तभी सार्थक हैं, जब वह काव्य रचना की स्वाभाविक अंग बन जाय।

BHDC-106.indd 107 19-03-2021 08:51:36

8.5 सारांश

सामान्य अर्थ में अलंकार आभूषण का पर्याय है। जैसे आभूषण शरीर की शोभा बढ़ाता है उसी प्रकार अलंकार का कार्य काव्य की शोभा बढ़ाना हैं। डॉ. हरदेव बाहरी के शब्दों में कहें तो 'रचनागत विशिष्ट शब्द योजना या अर्थ चमत्कार को अलंकार कहा जाता है।' संस्कृत काव्यशास्त्र में अलंकार एक व्यापक सौन्दर्याधायक अब धारणा के रूप में विकसित हुआ। जिसे सम्प्रदायगत से अलंकारवादियों तथा अन्य रस ध्वनि वादी आचार्यों ने विवेचित किया। अलंकार सम्प्रदाय में आचार्यों की ऐसी परम्परा मिलती हैं जो विशुद्व रूप से कालान्तर में रीति, वक्रोक्ति, ध्वनि, रस सिद्धान्तों के स्थापित होने के बावजूद अलंकार को काव्य की उत्कृष्टता का साधन मानते हैं। भामह, दण्डी, उदभर, रूड़र तथा प्रतीहारेन्दुराज जयदेव, अप्पयदिक्षित आदि आचार्य इसी परम्परा में आते हैं। भामह अलंकार सम्प्रदाय के संस्थापक हैं। हिंदी रीतिकालीन अलंकार विवेचन संस्कृत काव्याचार्यों के प्रभाव में लिखा गया। इनका मौलिक विवेचन नहीं है। आधुनिक काल में अर्जुन दास के डिया, रामदहिन मिश्र, जगन्नाथदास भानु ने अलंकार विवेचन किया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने सैद्धान्तिक आलोचना मे अलंकार पर विचार किया है। महावीर प्रसाद, गुलाबराय, सुमित्रानंदन पंत, डॉ. नगेन्द्र का अलंकार विवेचन इस विषय को सम्पूर्णता प्रदान करते हैं।

8.6 अवधारणात्मक शब्द

अतिशयोक्ति : उत्कर्ष व्यंजित करने वाला कथन।

विवृति : आचार्य उद्भट ने भामह के अलंकार सम्बंधी विवेचन को 'विवृति' कहा है।

अलंकार्य : जिसका अलंकरण किया जाय वही अलंकार्य है।

प्रतीयमान अर्थ : वह अर्थ जो व्यंजना द्वारा प्रकट होता है।

8.7 उपयोगी पुस्तकें

भारतीय काव्यशास्त्र : योगेन्द्र प्रताप सिंह, लेक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र की पहचान : प्रो. हरिमोहन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

भारतीय साहित्य शास्त्र और काव्यालंकार, डॉ. भोलाशंकर व्यास, चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी

काव्यांग विवेचन, डॉ. भगीरथ मिश्र एवं डॉ. बलभद्र तिवारी, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद

भारतीय काव्य समीक्षा में अलंकार सिद्धान्त, रेवा प्रसाद द्विवेदी, दि मैकमिलन कंपनी आफ इण्डिया लिमिटेड

भारतीय काव्यशास्त्र, डॉ. तारकनाथ, बाली वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

BHDC-106.indd 108 19-03-2021 08:51:36

8.8 बोध प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिए :

1) अलंकार की परिभाषा एवं स्वरूप पर चर्चा कीजिए।
2) अलंकार सम्प्रदाय से क्या तात्पर्य है? इसके अतंर्गत आने वाले आचार्यों का उल्लेख कीजिए।
3) अलंकार सम्प्रदाय के संस्थापक भामह की मान्यताओं की विवेचना कीजिए।
4) हिंदी साहित्य में अलंकार संबंधी चिंतन पर प्रकाश डालिए।

8.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1) देखिए भाग 8.2
2) देखिए भाग 8.1
3) देखिए भाग 8.3
4) देखिए उपभाग 8.4.2

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

BHDC-106.indd 109 19-03-2021 08:51:36